भगवत्प्राप्ति क्यों और कैसे?

अखंड ज्योति फरवरी 2023

परम पूज्य गुरुदेव बता रहे हैं कि भारतीय संस्कृति व सनातन धर्म के सम्पूर्ण सद् ग्रंथ एवं शास्त्रों के अनुसार भगवत्प्राप्ति ही मानव जीवन का परम लक्ष्य होना चाहिए क्योंकि भगवत्प्राप्ति के बिना मानव जीवन अधूरा है, निष्फल है। आनंद से भरा-पूरा जीवन ही पूर्ण जीवन है और आनंद की प्राप्ति "आनंद के आदिस्रोत" परमात्मा से ही संभव है। अनेकों भौतिक साधनों की सम्पन्नता एवं उच्कोटि की अर्थव्यवस्था के बावजूद आनंद की प्राप्ति बिल्कुल नहीं है। आनंदप्राप्ति के बाद ही मनुष्य दुःख , क्लेश, हताशा, निराशा, अशांति व जन्म-मरण के बंधन आदि से निवृत्त होकर आनंदित और प्रफुल्लित रह सकता है।

इसका बेसिक कारण यही है कि परमात्मा ही परमानंद (परम आनंद) के स्रोत हैं । परम आनंद की प्राप्ति केवल परमात्मा की उपासना, साधना व आराधना से

ही संभव है। जिस प्रकार हिमालय से जुड़ी सभी नदियों में बर्फ का जल स्वयं ही भरा हुआ होता है, वैसे ही ज्ञान, कर्म, भक्ति, ध्यान, जप, तप, प्रार्थना,, यज्ञ, पूजा आदि योग साधनों के नियमित एवं लगातार अभ्यास से मनुष्य जब परमात्मा में लीन हो जाता है तो उसके अंतःकरण में खुदबखुद ही आनंदस्वरूप परमात्मा की उपस्थिति की अनुभूति होती है। इस अनुभूति के होते ही सही मायनों में आनंद प्राप्त होना शुरू हो जाता है।

गुरुदेव लिखते हैं कि जहाँ आनंद होता है,वहीं उत्सव है। इसालिए साधक के हृदय में, साधक की आत्मा मे आनंदस्वरूप परमात्मा की अनुभूति होते ही साधक के जीवन का कायाकल्प होने लगता है और उसका जीवन उत्सव सरीखा हो जाता है व साधक का पल-पल, क्षण-क्षण पर्व एवं त्योहार बन जाता है। हर दिन होली व

हर रात दीवाली बन जाती है l अतः मानव जीवन का मुख्य लक्ष्य भगवत्प्राप्ति होना चाहिए l बड़े-बड़े राजा महाराजा,उनके राजकुमार,संत,भक्त व भगवत्प्रेमी सभी भौतिक सुख-सुविधायें त्यागकर ईश्वर के मार्ग पर चल पड़े। वे यह जान चुके थे कि यह मानव शरीर क्षणभंगुर (क्षण में ख़त्म होने वाला) है, सांसारिक सुख क्षणभंगुर है।हमारी सबसे बड़ी भूल है कि इस नाशवान मानव शरीर के पालन पोषण में सारा जीवन खपा देते हैं लेकिन आत्मा के लिए कुछ भी नहीं करते। आत्मा के भोजन का तो ज्ञान तक नहीं है। इसी अज्ञानता के कारण ही परम पिता परमात्मा के राज कुमार होने के बावजूद मानव भटक रहा है। हमारे शरीर के अंदर विद्यमान आत्मा, परमात्मा का ही अंश है, ज़रुरत है तो केवल इस तथ्य को जानने और समझने की।

मनुष्य की अज्ञानता व मोहमाया के कारण ही उसे सांसारिक विषय-भोगों में सुख का क्षणिक आभास दिखाई देता है। उसे लगता है कि मन में उठ रही वासनाओं व तृष्णाओं की पूर्ति से सुख मिलेगा और वह उन तृष्णाओं की पूर्ति में लग जाता है। सारा जीवन तृष्णाओं की पूर्ति करने के प्रयास के बावजूद तृप्ति नहीं मिलती, मिलेगी भी कैसे? यह सब तो क्षणिक है। अनंत काल तक विषय भोग के पश्चात भी मनुष्य के मन में वासनाएं व तृष्णाएं अतृप्त ही बनी रहती हैं,इनका कभी भी अंत नहीं हो पाता।

इस शाश्वत (सदा वाला सत्य) अतृप्ति के जाल से छूटने का पहला कदम यह मान लेना आवश्यक है कि वास्तविक सुख-शांति-आनंद भोगों से नहीं बल्कि परमपिता परमेश्वर से ही प्राप्त होंगे। इसलिए भोगों के पीछे भागने के बजाए परमात्मा के

मार्ग पर चल पड़ना चाहिए। इंद्रिय सुख क्षणिक सुख हैं, वास्तविक (real) नहीं। वास्तविक सुख तो आत्मा से ही संभव हो सकता है और आत्मिक सुख ही वास्तविक सुख है। आत्मिक सुख-शांति-आनंद तभी उत्पन्न होता है जब आत्मा में निरंतर आनंद के शाश्वत स्रोत परमात्मा का ध्यान किया जाए, यही परमानंद का मूल स्रोत है।

सही मायनों में आनंद की लहरों का अनुभव करने के लिए हमें विषय-भोगों से दूर रहना चाहिए और परमात्मा का दिव्य सानिध्य प्राप्त करने का हर सम्भव प्रयास करना चाहिए। विषय-भोगों से मिलने वाले क्षणिक सुखों के दुःखद परिणाम का स्मरण करते रहना चाहिए। तत्पश्चात इन क्षणिक सुखों के प्रति वैराग्य की भावना विकसित करनी चाहिए। सांसारिक विषयों के प्रति, मोहमाया के प्रति वैराग्य की भावना जितनी तीव्र होगी, मन में परमात्मा को पाने की चाहत उतनी

ही तीव्र होती जाएगी। इस स्थिति के प्राप्त होने
पर दुनिया की कोई भी ताकत परमानंद से रोक नहीं
सकती है। संसार के प्रति हमारा प्रेम जितना कम होता
जाएगा, परमात्मा के प्रति प्रेम उतना ही प्रगाढ़ होता
जाएगा। इसी संदर्भ में श्री रामकृष्ण परमहंस साधकों
व शिष्यों से कहा करते थे कि व्यक्ति कलकत्ता से
बनारस की ओर जितना अधिक बढ़ता जाता है,
कलकत्ता उतना ही पीछे छूटता जाता है और बनारस
उतना ही पास आता जाता है, बनारस पहुँचते ही
कलकत्ता पूरी तरह पीछे छूट जाता है। कहने का तात्पर्य
यह था कि साधक का परमात्मा के प्रति प्रेम जितना
बढ़ता जाता है, सांसारिक बंधन पीछे छूटते जाते हैं।
इस तरह निरंतर परमात्मा की ओर बढ़ते रहने से एक
दिन संसार पूरी तरह पीछे छूट जाता है और साधक व
शिष्य परमात्मा को प्राप्त कर लेता है।

मनुष्य को निरंतर, नियमितता से परमात्मा के मार्ग पर अग्रसर होते रहना चाहिए। इस मार्ग के बारे में एक बात जो साबित होती है वोह यह है कि अन्य मार्गों की तुलना में ईश्वर का मार्ग बहुत ही कठिन है क्योंकि इस मार्ग पर बहुत बाधाएं उत्पन्न होती है
जिनका सामना करना सहज व सरल नहीं है। यह एक बहुत बड़ी चुनौती है। अध्यात्म के मार्ग पर, ईश्वर के मार्ग पर चलते हुए, ईश्वर का स्मरण व ध्यान करते हुए साधक के अचेतन मन में सूक्ष्म रूप से व्याप्त जन्म-जन्मांतरों के संस्कार साधक को बार-बार विषय-भोगों, वासनाओं,तृष्णाओं के सुख बार-बार आकर्षित करते रहते हैं। यह आकर्षण साधक को साधना-पथ से विचलित करता है।अध्यात्म मार्ग में विषय भोगों की जंग बहुत बड़ी जंग है, जिसने इस जंग को जीत लिया

तो समझ लेना चाहिए कि उसकी पात्रता विकसित हो गयी है ।

गुरुवर बताते हैं कि बहुत से कच्चे साधक इस आकर्षण में उलझकर साधना मार्ग से विचलित भी हो जाते हैं लेकिन जिनके मन में वैराग्य की अग्नि अखंड रूप से धधक रही होती है, उनके संस्कार इस अग्नि में भस्म होकर नष्ट हो जाते हैं और साधक का मार्ग अवरोध-रहित हो जाता है। ईश्वर के प्रति प्रगाढ़ होता जाता है । यहाँ समझने की बात यह है कि ईश्वर के प्रति हमारा प्रेम जितना प्रगाढ़ होता जाता है, उतना ही मन ईश्वर में एकाग्र होता जाता है। ईश्वर के प्रति अटूट विश्वास,प्रगाढ़ प्रेम साधक के मन की चंचलता को दूर करते हुए एकाग्रचित कर भक्ति में लीन कर देता है। ऐसी स्थिति आ जाने पर, फिर कितनी भी विषम परिस्थितियाँ आ जाएं, साधक विचलित नहीं होता और

विषय-भोगों के लिए मन इधर-उधर न तो भागता है और न ही साधक इनकी चिंता करता है। ईश्वर का स्मरण करते ही मन पूर्ण रूपेण ईश्वर में लीन होने लगता है।

अतः ईश्वर को पाने की तीव्र लालसा के साथ-साथ ईश्वर के प्रति प्रेम एवं अटूट विश्वास भी आवश्यक है। ईश्वर में लीन साधक अपने सांसारिक, पारिवारिक व सामाजिक उत्तरदायित्वों का निर्वाहन भी सामान्य लोगों की अपेक्षा अधिक एकाग्रता व कुशलतापूर्वक करता है क्योंकि वह अपने प्रत्येक काम को ईश्वर का काम मानकर उसे पूजा की तरह पवित्र व निष्काम भाव से सम्पन्न करता है।

सफलता-असफलता,लाभ-हानि,हार-जीत आदि द्वंद्वों से मुक्त होकर स्वयं को परमात्मा के हाथों का एक यन्त्र मानते हुए अपने कर्त्तव्यों का पालन बहुत ही निष्ठा व

समर्पण की भावना से करता जाता है। जीवन में हर कर्म भगवत्कर्म बन जाता है और वह साधक पूर्णता को प्राप्त कर जाता है। साधक को चाहिए कि वह साधना में कभी भी न तो अधीर हो और न ही उकताए । दृढ़ विश्वास रखना कि किया जा रहा अभ्यास कभी व्यर्थ नहीं जा सकता, बहुत लाभकारी होता है।

यह सच है कि निरंतर अभ्यास से मनुष्य निसंदेह अपने लक्ष्य की प्राप्ति कर ही लेता है लेकिन इसके लिए कोई काल या अवधि निर्धारित करना उचित नहीं है। श्रद्धा, प्रेम व विश्वास के साथ अगर आजीवन भगवत्प्राप्ति के लिए अभ्यास किया जाए तो ईश्वर ज़रूर मिलेंगे। साधकों को इन शब्दों का भी स्मरण रखना चाहिए कि "माँगो वह तुम्हें मिलेगा, ढूंढो तुम उसे पाओगे, खटखटाओ तुम्हारे लिए खुल जाएगा।" यह शब्द पूर्ण रूप से सत्य हैं, न कि काल्पनिक। इस सत्य की अनुभूति

हम नित्य ही साधना के द्वारा अभीष्ट लक्ष्य की प्राप्ति हो जाने पर कर सकते हैं।

भगवत्प्राप्ति के इच्छुक साधकों के लिए परम पूज्य गुरुदेव युगऋषि पंडित श्रीराम शर्मा आचार्य जी द्वारा प्रकाशित उपासना, साधना व आराधना का पथ अत्यधिक सुगम, सहज, सरल व पूर्ण पथ है। उपासना के अंतर्गत अपने हृदय में ज्योतिस्वरूप परमात्मा का नित्य ध्यान करना चाहिए, प्रातःकालीन उदीयमान सूर्य के ज्योतिस्वरूप परमात्मा का ध्यान करना चाहिए। साधना के अंतर्गत प्रत्येक साधक को इंद्रिय संयम, विचार संयम, अर्थ संयम व समय संयम का अनवरत अभ्यास करना चाहिए। आराधना के अंतर्गत इस अखिल विश्व ब्रह्माण्ड को परमात्मा की ही भौतिक अभिव्यक्ति मानकर जन-जन की सेवा करनी चाहिए

क्योंकि “जीव सेवा ही शिव सेवा है, नर सेवा ही नारायण सेवा है और मानव सेवा ही माधव सेवा है।”

समाप्त

अब सौंप दिया इस जीवन का हर भार